।। सुयं मे आउसं ।।

श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन का संवाद-सेतु

श्रुतदीप

विक्रम संवत २०७८ • वर्ष : ५ • अंक : ३ • फरवरी २०२२

भारत के प्राचीन हस्तप्रत भंडार

-वैराग्यरतिविजय

आज वर्तमान भारत का स्वरूप देखकर उसकी भूतकालीन भव्यता का अनुभव करना काफी कठिन है। लगभग एक हजार वर्ष पहले विदेशी-मुस्लिम आक्रमणकारियों ने उस काल की भव्य प्रतिमा को काफी बर्बर तरीके से तहस-नहस किया है। इस विध्वंस से पूर्व भारत की समृद्धि का निखार कुछ और ही था। जालिमों ने अपार ज्ञानसंपदा को लूटा और जलाकर राख भी किया। अपनी मतांध विचारधारा के कारण उन आक्रमकों ने इस देश की ज्ञानसंपदा के साथ यहां की सांस्कृतिक विरासत को भी खंडहर में तब्दिल कर दिया। इस तूफानी बवंडर के बावजूद थोडे बहुत जो अवशेष बचे हैं उन्हें देखकर प्रमाणित होता है कि भारत उस समय अपनी बौद्धिक उंचाईयों को छू रहा था।

विदेशी आक्रांताओं के आने से पूर्व यह देश केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि राजनैतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, वैचारिक और नैतिक मापदंडो में भी विश्व में सबसे उंचे दर्जे पर था। सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक समृद्धि की धूम थी। असंख्य मंदिरों के साथ बडे-बडे ग्रंथालय भी थे। अनेक बडे-बडे विद्यापीठ थे। अध्यात्म, दर्शन, साहित्य, वैद्यकीय और विज्ञान का समूचा ज्ञान उस समय हस्तलिखित पत्रों की पोथियों में समाया हुआ था। गांव, नगर, जनपद में अनेक पाठशालाएँ थी। शिक्षण उस काल की परंपरा का मूलभूत अंग था। शैक्षणिक व्यवस्था में मुखपाठ अभ्यास की मुख्य परंपरा थी। भाषा और गणित के प्राथमिक ज्ञान को सिखने के लिए केवल मुखपाठ की कला का ही उपयोग होता था। प्राथमिक शिक्षा के लिए पुस्तकों का आधार नहीं लिया जाता था। केवल उच्चस्तरीय विद्याभ्यास (Post-Graduation) के लिए पुस्तकों की जरुरत होती थी। चिकित्सा, अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, अभियांत्रिकी (Engineering), विज्ञान (Science), कला (Art), व्यवहार कला (स्त्री की ६४ एवं पुरुष की ७२ कलाएँ), गणित, भूगोल (Geography), खगोल (Astronomy), ज्योतिष (Astrology), सामुद्रिक, पशुपालन, युद्धकला, शस्त्रास्त्रविद्या, दर्शन (Philosophy), अध्यात्म (Spirituality) जैसी विद्याशाखाओं के लिए समृद्ध विद्यापीठों की अनेक राज्यों में स्थापना थी।

उपरोक्त तमाम विद्याशाखाओं के अभ्यास के लिए अनेक शास्त्रों के निर्माण किये जाते थे। शास्त्र लेखन में विशेष पद्धति का अवलंब लिया जाता था। मुख्यत: अभ्यास चार स्तर पर होते थे-अध्ययन, चर्चा, निष्कर्ष और परिष्कार। (Study, Debate, Conclusion, Evaluation) विद्यार्थी शिक्षक के पास एक विषय का अभ्यास करता था। पूरा अभ्यास बिना किताब के मुखपाठ ही होता था। हर विषय का शास्त्र श्लोक में बद्ध होने से उसको याद रखना आसान था। विषय को समझ लेने के बाद उस विषय की चर्चा करना विद्यार्थीओं के लिए बाध्य था। उसे वाद कहा जाता था। वाद में एक तरह परीक्षा होती थी। उस में विद्यार्थी की बुद्धि कसी जाती थी। विद्यार्थी उस विषय का तात्पर्य समझकर अपनी प्रतिभा के अनुरूप निष्कर्ष प्रस्तुत करता था। उसके बाद परीक्षा होती थी जिस से विद्यार्थी अपने ज्ञान को स्पष्ट करता था।

उस काल के विद्यार्थी सीखी गई विद्या को अपने जीवन का आधारभूत अंग मानकर उसे आचरण में प्रस्तुत करते थे। अपने ज्ञान से दूसरों को विद्याभ्यास करवाते थे। इस कारण उस व्यवस्था के अनुकूल निपुण अध्यापक सहज उपलब्ध हो जाते थे। ग्यारहवीं शताब्दी में श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित में नलराजा का वर्णन करते हुए लिखा है कि-नलराजा ने १४ विद्याओं का अभ्यास चार चरण में किया था। - १) अभ्यास और चर्चायुक्त अध्ययन २) बोध अर्थात् निष्कर्ष (Conclusion) ३) आचरण और ४) प्रचार (अधीतिबोधाचरणप्रचारणै: १-४)

उच्चस्तरीय (Post-Graduation) शिक्षण हेतु शास्त्र निर्माण, शास्त्रपाठन और शास्त्रलेखन की सुव्यवस्थित व्यवस्था थी। लेखन कला का एक अलग विभाग होता था। कुशल प्रतिलेखकों (लहिया) को हस्तप्रत लेखन के जरिए रोजगार मिलता था। लिखी गई हस्तप्रतों की पोथियों के भंडारण की समुचित व्यवस्था होती थी। असंख्य सरस्वती भंडारों में व्यवस्थापकों को हस्तप्रतों के संरक्षण की जिम्मेदारी सौंपी जाती थी। उस काल में विद्यापीठों एवं हस्तप्रतों को राजकीय, सामाजिक संरक्षण और आदर प्राप्त होता था। मगर आज वर्तमान भारत के तमाम विद्यापीठों के भंडारों एवं अन्य सार्वजनिक भंडारों की अवदशा के कारण बडी तादात में ज्ञान की बची-खुची धरोहर भी नष्टप्राय: होती जा रही है।

अनेक ऐतिहासिक स्त्रोतों द्वारा कुछ प्राचीनतम भंडारों के बारे में जानकारियाँ प्राप्त होती है। उन्हीं का आधार लेकर प्रस्तुत लेख लिखने का मनोदय हुआ है।

लगभग दो वर्ष पूर्व अहमदाबाद के हिरेनभाई दोशी द्वारा मुझे भेजी किसी पुस्तक के परिशिष्ट में कुछ चर्चित ज्ञानभंडारों की सूचि मिली। इस सूचि में ईसापूर्व ३०० से लेकर इ. स. १९४७ तक के कुछ विशेष पुस्तकालयों का संक्षिप्त विवरण मिलता है। प्रस्तुत लेख उसी सूचि के आधार पर तैयार हुआ है।

१) तक्षशिला- ईसा पूर्व ३२४ (विक्रम पूर्व ३८०) वर्ष अर्थात् आज से लगभग २३०० वर्षों पूर्व तक्षशिला का ज्ञानभंडार भारत का एक समृद्ध ज्ञानभंडार था। जैन इतिहास की दृष्टि से तक्षशिला प्रथम तीर्थंकर श्री **ऋषभदेव**जी के पुत्र **बाहुबलिजी** की राजधानी था। **सिकंदर** वहां के नगर का वैभव देखकर चकित रह गया था। तक्षशिला को विश्व के सबसे प्राचीनतम विद्यापीठ होने का गौरव प्राप्त है। पाणिनि जैसे वैयाकरण, **जीवक** जैसे वैद्य और **चाणक्य** जैसे अर्थशास्त्री ने इसी विद्यापीठ से शिक्षा प्राप्त की थी। आज उसका अस्तित्व लगभग उध्वस्त है। उस स्थान की खुदाई से प्राप्त छात्रावास, क्रीडांगण, स्नानागार और अनेक शैक्षणिक अवशेषों से पता चलता है कि वहाँ कभी कोई परिपूर्ण शैक्षणिक परिसर रहा होगा। इसी जगह स्थित गंगू नामक स्तूप से तत्कालीन अंग्रेज जनरल कनिंघम को स्वर्णपत्र पर खरोष्ठि लिपी में लिखा एक लेख प्राप्त हुआ था।

तक्षशिला विद्यापीठ में एक आचार्य की प्रमुखता में ५०० विद्यार्थी भिन्न-भिन्न कलाक्षेत्रों का अभ्यास करते थे। विश्वस्तरीय अध्यापक अध्यापन सेवा प्रदान करते थे। ईसा की पहली (विक्रम की दूसरी) शताब्दी तक तक्षशिला जैसे भारत की चारों दिशाओं में चार एवं मध्यभारत में एक ऐसे पांच विश्वविख्यात विद्यापीठ थे। उत्तर भारत में तक्षशिला, पश्चिम में वलभी, पूर्व में नालंदा, दक्षिण में कांचीपुर और मध्यभारत में धान्यकूट की गणना सर्वपरिपूर्ण और व्यापक शैक्षणिक व्यवस्था वाले विश्वविद्यालयों में होती थी। ऐतिहासिक संदर्भों से अनुमान लगाया जा सकता है कि, इन विद्यापीठों में काफी बडे हस्तप्रत भंडार रहे होंगे।

२) पाटलिपुत्र (पटना)– वर्तमान में बिहार में स्थित इस नगर को श्रेणिक महाराजा के पुत्र कुणिक (अजातशत्रु) ने बसाया था। पाटलिपुत्र उस काल में भारत का सबसे समर्थ और सक्षम राज्यसत्ता का केंद्र था। यहीं पर ईसा पूर्व २४६ में बौद्धधर्म की पहली संगति का आयोजन हुआ था, जिसमें बौद्धउपदेशों को व्यवस्थित स्वरूप प्राप्त हुआ था। आर्य श्री स्थुलभद्रसूरिजी की अध्यक्षता में लगभग उसी काल में आगम वाचना भी हुई थी। यह वह काल था, जब श्रमणपरंपरा में मुख्यत: आगम मुखपाठ याद रखे जाते थे। कालांतर में १२ वर्षों तक आए भीषण अकाल के समय श्रमण व्यवस्थाएँ यत्र-तत्र बिखरने के कारण मुखपाठ की परंपरा को भारी क्षति पहुँचने लगी। आगमों को कंठस्थ याद रख पाना असंभव होने लगा। इन सब बातों को पुन: व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने के कार्य संपन्न हुए। श्रुतरक्षा के इतिहास का वह अविस्मरणीय प्रसंग था। उदायी राजा के बाद नवनंदों के समय और मौर्यकाल में पाटलिपुत्र ब्राह्मण और श्रमण परंपरा का विशिष्ट विद्याकेंद्र था। नि:संदेह उस कारण यहाँ विशाल ग्रंथभंडार भी रहे होंगे।

३) कश्मीर– ईसा पूर्व १४० (विक्रम पूर्व २००) वर्ष से कश्मीर विद्यावंतों का विशिष्ट और सक्रिय केंद्र था। व्याकरण भाष्यकार, योगसूत्र के रचयिता और वैद्यकशास्त्र के उद्गाता **पतंजलि** ऋषि कश्मीर के ही थे। विक्रम की तेरहवीं शताब्दी में आचार्य **हेमचंद्राचार्यजी** ने **सिद्धराज** की विनंति से जब नूतन व्याकरण बनाना प्रारंभ किया था तब भिन्न-भिन्न आठ व्याकरण ग्रंथ उन्होंने कश्मीर से बुलवाये थे।

४) उज्जैन– मध्यभारत की यह प्राचीन नगरी है। महाराजा **संप्रति** ने इसे अपने सत्ता का केंद्र बनाया था। उसके बाद तो यह नगरी भारतीय संस्कृति के प्रवाह का मुख्य केंद्र बन गई। विक्रम की पहली शताब्दी में आचार्य श्री **सिद्धसेनदिवाकरजी** ने यहाँ महाकाल प्रासाद प्रगट किया था। उन्होंने राजा **विक्रमादित्य** को प्रतिबोधित किया था। पुराण कथानुसार कृष्ण के विद्यागुरु **सांदीपनिजी** का एकपाद आश्रम इसी नगरी के समीप है। यहाँ **भर्तृहरि** की गुफा है। महाभारत के काल में यहाँ विशाल ग्रंथ भंडार था। इस नगरी को **विक्रम**, सम्राट **संप्रति** और **भर्तृहरि** जैसे विद्याप्रेमी राजाओं का स्नेह प्राप्त हुआ है। विशेषत: यह नगरी श्रमण परंपरा के आवागमन का मुख्य केंद्र थी। इस कारण यहाँ समृद्ध ज्ञानभंडार थे।

५) धान्यकूट– ईसा १६० अर्थात् विक्रम सं. २५६ में उडीसा में आचार्य **नागार्जुन** ने बौद्धविहार बनवाएँ थे और धान्यकूट विश्वविद्यालय की स्थापना की थी। नागार्जुन ने अनेक शास्त्रों की रचना भी की थी। इस आधार पर निश्चित रूप से धान्यकूट ग्रंथ संपदा का केंद्र रहा होगा। विक्रम की तीसरी शताब्दी (ईसा २२२, विक्रम सं. २७८) में **धर्मपाल** नामक बौद्ध भिक्षु मध्यभारत से चीन गए थे। वहाँ उन्होंने पातिमोक्ख नामक शास्त्र का चीनी भाषा में अनुवाद किया था। विक्रम की तीसरी-चौथी शताब्दी में चीनी भाषा में अनेक बौद्धशास्त्रों का अनुवाद हुआ है।

६) थानेश्वर– ई.सन ५०० के दरम्यान थानेश्वर विश्वविद्यालय का समयकाल है। मगर इस विद्यापीठ की विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं हो पायी है। चीनी यात्री **ह्वेन-त्संग** ने इसका उल्लेख किया था। ऐसा कहा जाता है कि श्रीहर्ष के गुरु गुणप्रभ इसी विद्यापीठ के थे।

७) नालंदा– नालंदा भारत का प्राचीनतम विश्वविद्यालय रहा है। इसका समय काल ईसा ६३० वर्ष पूर्व का माना जाता है। **ह्वेन-त्संग** जब भारत आया तब नालंदा की कीर्ति शिखर पर थी। यहाँ लगातार दस हजार भिक्षु रहते थे। यहाँ रत्नोदधि, रत्नसागर और रत्नरंजक नाम के तीन बडे ग्रंथ भंडार थे। वे नौ मंजिले थे। उसमें तीन लाख से अधिक पांडुलिपियाँ थी। **ह्वेन-त्संग** रत्नोदधि नामक भंडार से पांडुलिपियाँ चीन ले गया था। बारहवीं शताब्दी में खिलजी वंश के आक्रमक शासक बख्तियार ने उन ग्रंथ भंडारों में आग लगवा दी, जिसकी लपटें सात दिनों तक ठंडी नहीं पडी।

८) वलभी– विक्रम की सातवीं सदी में वलभी गुजरात के सौराष्ट्र की राजधानी थी। यहाँ ८४ जिनमंदिर थे। इसी स्थान पर श्री **देवर्धिगणि** ने विक्रम की पांचवीं सदी में आगम वाचना की थी और समस्त जैन सिद्धांत को पुस्तकारूढ करवाया था। सातवीं सदी में वलभी बौद्ध शिक्षा का केंद्र बन गया। मैत्रक वंश के राजाओं ने ज्ञानभंडारों के लिए यहाँ विपुल दान दिया था। वलभी में ही जैनधर्म के संपूर्ण ज्ञानभंडार का निर्माण हुआ होगा, मगर वर्तमान में उसके कोई भी अवशेष नहीं मिलते है।

९) विक्रमशिला (बिहार)– विक्रम की आठवीं शताब्दी में बौद्ध भिक्षु **धर्मपाल** ने इस विहार की स्थापना की थी। इस विहार के छ दरवाजे थे। प्रत्येक दरवाजे पर एक पंडित की नियुक्ति होती थी। जिन्हें यहाँ विद्याभ्यास करने के लिए प्रवेश करना होता, उसे इन द्वारों पर उपस्थित पंडित को चर्चा में परास्त करना होता था। यहाँ भी एक विशाल ग्रंथभंडार था, जिसे **बख्तियार खिलजी** ने नष्ट कर दिया था।

१०) सरस्वती महल (तंजौर)– विक्रम की दसवीं शताब्दी में यहाँ बडा ग्रंथभंडार था। जिसे तंजौर के महाराजा ने समृद्ध किया था। १८वीं शताब्दी में महाराजा **सरफोजी** ने इसे और अधिक समृद्ध बनवाया।

११) धार (मालवा)– प्राचीन धारा नगरी अर्थात् वर्तमान में धार, राजा **भोज** की राजधानी थी। भोज स्वयं विद्वान था। उसकी सभा में उत्तमोत्तम पंडित थे। राजा **भोज** द्वारा स्थापित ज्ञानभंडार का उस काल में काफी महत्त्वपूर्ण स्थान था। बारहवीं सदी में **सिद्धराज जयसिंह** ने धारानगरी पर विजय प्राप्त करके यहाँ का ग्रंथ भंडार पाटन भेजा था।

१२) जैसलमेर (राजस्थान)– ग्यारहवीं सदी में जैसलमेर में दस ग्रंथ भंडार थे। पंद्रहवीं सदी में आचार्य श्री **जिनभद्रसूरिजी** के मार्गदर्शन में यहाँ एक बडा ग्रंथभंडार स्थापित हुआ था।

१३) आगरा– विक्रम की सोलहवीं सदी में यहाँ अकबरशाही पोथीखाना (ज्ञानभंडार) था जिसमें ३० हजार हस्तप्रतें थी। अकबर ने **पं. पद्मसुंदरगणि** का भंडार आचार्य श्री **हीरविजयसूरिजी** को भेट स्वरूप प्रदान किया था। यह ग्रंथ भंडार आगरा में ही पुन: **अकबर** के नाम से ही स्थापित हुआ।

१४) आमेर (राजस्थान)– आमेर के राजा **भारमल्ल** ने ई.सन १५९२ (वि. सं. १६५६) में अपने राजघराने का ज्ञानभंडार स्थापित किया था। आमेर राजवंश के चार सौ वर्षों के राज्यकाल में यह भंडार सर्व समृद्ध था। जिसमें ७००० दुर्लभ ग्रंथ उपलब्ध थे।

उपरोक्त जानकारीयाँ केवल उन्हीं ग्रंथभंडारों के विषय में दी गई है, जिनके नाम सर्वोपरि ज्ञात हुए हैं। वैसे भारत के प्राचीनतम भंडारों की बहुत कम जानकारियाँ उपलब्ध हो पाती है। उपरोक्त भंडारों के अतिरिक्त भी ऐसे और भी अनेक भंडार थे जिनके नाम पहचानना भी कठिन है। प्राचीनकाल में अनेक राजा अपने संग्रह में भिन्न-भिन्न विषयों की हस्तप्रतें रखवाते थे। प्रत्येक राजा का एक सर्वसामान्य पुस्तकालय होता था। उस काल की पाठशालाओं में भी प्रचुर मात्रा में हस्तप्रतें संग्रहीत की जाती थी। मंदिरों, मठों, विहारों एवं जैन उपाश्रयों में काफी तादाद में हस्तलिखित पांडुलिपियों का लेखन-संग्रह होता था। वैद्यकीय क्षेत्र के निष्णातों के भी पृथक् संग्रहालय होते थे। मंत्री, पुरोहित और विद्वान लोगों का भी अपना व्यक्तिगत संग्रह होता था। आज भी अच्छे प्रयास से उस प्राचीन विरासत की खोज की जा सकती है, मगर उस तरह की प्यास आज तो कहीं से भी उठती नहीं दिखायी देती है।

कालांतर में अंग्रेज भारत आए और यहाँ भी यंत्रयुग की शुरुआत हुई। शिक्षा व्यवस्था में बडे बदलाव आये। भारत की परंपरागत जीवनशैली के साथ ज्ञानपद्धति ने भी नया रूप धारण कर लिया। परिणाम स्वरूप भारत की प्राचीन ज्ञानसंपदा की वह अद्भुत विरासत भी उपेक्षित होने लगी। अनेक संग्रहालय देखरेख के अभाव में स्वयं ही नष्ट होते चले गए। अनेक ज्ञानभंडारों को तो अज्ञानी लोगों ने पानी में बहा दिया। अनेक ग्रंथ भंडार ऐसे थे जिनपर अंग्रेज विद्वानों की नजर पडी। उन्होंने अपने प्रयास से शोध करवाना प्रारंभ किया और यहीं से हस्तप्रतों की शोधयात्रा प्रारंभ हुई। इधर-उधर बिखरी पडी प्राचीन प्रतों को जमा करने का काम शुरु हुआ। उस समय संग्रहीत हस्तप्रतों के लिए लाइब्रेरी, सोसायटी जैसी संस्थाओं का गठन हुआ। यह सिलसिला भारत की स्वतंत्रता के बाद भी चलता रहा। नयी सरकार के हाथ भी अनेक व्यक्तिगत संग्रह और सार्वजनिक संग्रहालय आये। प्रसंगवश ऐसे संग्रहालयों का

उल्लेख करना भी यहाँ जरूरी है–

१) राष्ट्रीय अभिलेखागार (दिल्ली)– ११ मार्च १८९१ में अंग्रेजों द्वारा इंपिरियल रेकार्ड डिपार्टमेंट की स्थापना हुई थी। **बुल्हेर, पीटर्सन, मित्रा** और **भांडारकर** जैसे देशी–विदेशी विद्वानों ने संपूर्ण भारत में उपलब्ध हस्तप्रतों का सर्वेक्षण किया। काफी संख्या में हस्तप्रतों की खरीद भी की गई और एक बडा संग्रहालय दिल्ली में स्थापित हुआ। इस संग्रह में हस्तलिखित पांडुलिपियों, शिलालेखों के साथ प्राचीन मूर्तियों एवं काफी पुरातत्त्वीय वस्तुओं का भी समावेश हुआ। लगभग एक लाख हस्तप्रतें यहां संग्रहीत हुई। आजादी के बाद इस संग्रहालय का नाम बदलकर **राष्ट्रिय अभिलेखागार** किया गया। अनेक हस्तप्रतों की माइक्रोफिल्म (सूक्ष्म छायाचित्रण) बनाकर उन्हें यहाँ सुरक्षित रखा गया है।

२) खुदाबख्श लाइब्रेरी (पटना)– ईसा १८१५ से १८७६ के दरम्यान **महम्मद बख्श** नामक ईस्लामी व्यक्ति ने पटना में यह संग्रहालय बनवाया था जिसे उसने अपने पुत्र खुदाबख्श का नाम दिया था। बाद में **खुदाबख्श** ने इस संग्रहालय में और भी अधिक हस्तप्रतों को जोडकर इसे सार्वजनिक पुस्तकालय के रूप में रूपांतरित कर दिया। आज इस संग्रहालय में लगभग १२००० हस्तप्रतें हैं, जिसमें १३०० वर्ष पुराना कुरान का एक पन्ना भी है। इसके अलावा **हुमायूं, जहांगीर** और **शाहजहां** के हस्ताक्षर वाले पत्र भी रखें हैं।

३) सिंधिया पुस्तकालय (उज्जैन)– विक्रम विश्वविद्यालय परिसर में सिंधिया प्राच्य शोध संस्थान के नाम से वर्तमान में यह संग्रहालय है। यहां लगभग २५०० दुर्लभ ग्रंथ हैं, जिसमें एक ग्रंथ गुप्तकालीन लिपि में लिखा गया है। यह ग्रंथ काश्मीर के गिलगिट क्षेत्र से मिला है, जिसे भोज और ताडपत्र पर लिखा गया है।

४) भरतपुरा– श्री **गोपालनारायणसिंह** ने ४००० हस्तप्रतों का संग्रह किया था, जिसमें कुछ प्रतें नीलम और सच्चे सोने की स्याही लिखी गई हैं।

५) प्राच्यविद्या मंदिर (बडौदा)– गुजरात में श्रीमंत सयाजीराव गायकवाड द्वारा स्थापित विद्यापीठ में ७८३४ हस्तप्रतों का संग्रह है। इनमें से कुछ प्रतें उन्होंने स्वयं लिखवायी थी और बाकी अन्य भंडारों से प्राप्त हुई थी।

६) लालभाई दलपतभाई संस्कृति विद्यामंदिर (अहमदाबाद)– आगम प्रभाकर मुनिराज श्री **पुण्यविजयजी** म.सा. ने अपने संग्रह की दस हजार हस्तप्रतें इस संस्थान को अर्पण की है। इसके बाद गुजरात के अनेक गावों में स्थित भंडारों की प्रतों का भी इसमें समावेश होता गया। आज इस संस्थान में लगभग एक लाख हस्तप्रतें उपलब्ध हैं।

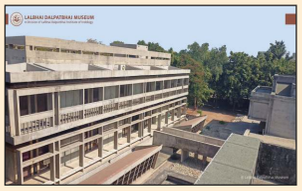

७) आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानभंडार (कोबा–अहमदाबाद)– परम पूज्य आचार्यदेव **श्रीपद्मसागरसूरिजी** म.सा. ने संपूर्ण भारत में भ्रमण करते हुए भिन्न–भिन्न स्थानों पर, जहां हस्तप्रतों का समुचित संग्रह नही हो पा रहा था, ऐसे अनेक ग्रंथालयों से एकत्रित करके विशाल ज्ञानभंडार की स्थापना की। हस्तप्रतों के संरक्षण की उत्तम व्यवस्था तैयार की। वर्तमान में यहां लगभग २ लाख हस्तप्रतों का संग्रह है। संस्था द्वारा यहां उपलब्ध प्रतों की नकल सहजता से उपलब्ध करवाई जाती है। संभवत: भारत ही नही, अपितु विश्व का यह सबसे बडा हस्तप्रत संग्रह है।

८) भांडारकर रिसर्च ईन्स्टीट्युट (पूना)– यहां २९५०० हस्तप्रतों का संग्रह है, इनमें लगभग ७००० से अधिक जैन हस्तप्रतें है।

उपरोक्त भंडारों के अतिरिक्त मद्रास, नागपुर, लखनऊ, सुरत (विंचेस्टर संग्रहालय) अजमेर, वाराणसी (भारतीय कला भवन, संपूर्णानंद विश्वविद्यालय, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, बनारस हिन्दु युनिवर्सिटी) कलकत्ता, बीकानेर, अलवर, कोटा, प्रयाग, सिमला, हैद्राबाद (सालारजंग संग्रहालय), टोंक (कुतुबखाना–ए–सैयदिया) आदि संग्रहालयों (Museum) अथवा संशोधन संस्थाओं में भी हस्तप्रतों का संग्रह मिलता है।

पूर्वकाल में राजस्थान के प्रत्येक गांव में, जहां उपाश्रय होते थे, वहां हस्तप्रतों का भी संग्रह होता था। उस काल के कई यतियों ने अनेक हस्तप्रतों को सरकारी संग्रहालयों को भेट कर दी और काफी हस्तप्रतें अन्य संस्थाओं में चली गई। इसके बावजूद आज भी अनेक स्थानों पर काफी हस्तप्रतें अस्तव्यस्त पडी दिखाई पडती है।

विदेशों में नेपाल, श्रीलंका, चीन, सीरिया, मैक्सिको, स्पेन, लंदन, जर्मनी, अस्त्रपात (रशिया) बुखारा आदि स्थानों पर भी प्राचीन भारतीय हस्तप्रतें होने की संभावना है।

मिथिला, नवद्वीप, वैशाली, प्रयाग, अयोध्या आदि भारत के प्राचीन विद्याकेंद्र रहे है। वहां भी ज्ञानभंडारों में हस्तप्रतों के संग्रह की परंपरा थी।

वियन्ना विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डो. **डोमिनिक वुजास्तिक** ने भारतीय पांडुलिपि नामक एक शोधपत्र प्रस्तुत किया है। उसके समापन में वे बताते है कि–

हस्तप्रत भारतीय साहित्य की आधारशिला हैं। इसमें भरा ज्ञान महासागर जितना है। अगर उस प्राचीन विरासत के ज्ञान का पुनरुत्थान करने की मंशा हो और गंभीर विषयों की जानकारी की जिज्ञासा हो, तो सबसे पहले वर्तमान भारतीय विश्वविद्यालयों को अंग्रेजी भाषा और साहित्य की बंदिस्तों से बाहर आने की आवश्यकता है। इसके अलावा व्यापक रूप से भारतीय अभिजात भाषाओं (प्राकृत, संस्कृत आदि) के अध्ययन को पुन: गति प्रदान करनी पडेगी। हस्तप्रतों में छिपी प्राचीन ज्ञान की बहुमूल्य विरासत के लुप्त हो जाने से पूर्व यह कार्य कोई शक्ति शुरु करेगी, यह देखना शेष है।

विशेषत: क्या श्रमणप्रधान चतुर्विध संघ इस उपेक्षित क्षेत्र पर गंभीर दृष्टि प्रदान करना जरुरी समझेगा? यह प्रश्न भी प्रासंगिक है।

– (हिंदी रूपांतर – ओम ओसवाल)

समाचार

दि. २४/११/२०२१ के दिन **गच्छाधिपति पूज्य आचार्य श्री दोलतसागरसूरिजी म.सा.** आदि की पावन निश्रा में **श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ बाबाजी महाराज तीर्थ**, कात्रज में प्रतिष्ठा उत्साहपूर्ण वातावरण में संपन्न हुई।

पूज्य आचार्य श्री मोक्षरतिसूरिजी म.सा. की पावन निश्रा में दि. ०७/१२/२०२१ से १०/१२/२०२१ तक डिवाईन सोसायटी, वानवडी, पुणे में **श्री सुखवर्धक कुंथुनाथ भगवान** आदि जिनबिंबों की और दि. १०/१२/२०२१ से १४/१२/२०२१ तक मातुश्री पुष्पाबेन हसमुखराय शाह परिवार, क्लाउड नाईन सोसायटी, पुणे में गृहजिनालय में **श्री आदिनाथ भगवान** आदि जिनबिंबों की प्रतिष्ठा उत्साहपूर्ण वातावरण में संपन्न हुई।

दि. १५/१२/२०२१ के दिन पूज्य गुरुदेव की निश्रा में आईकोन सोसायटी, लुल्लानगर में **श्री वासुपूज्यस्वामि जिनालय** का भूमिपूजन तथा खननविधि और दि. २३/०१/२०२२ के दिन शिलास्थापना उत्साहपूर्ण वातावरण में संपन्न हुई।

कार्यविवरण

शास्त्र संशोधन प्रकल्प अंतर्गत **लोकप्रकाश, पृथ्वीचंद्रचरित्र, प्रवचनविचारसार, उपदेशशत सह अवचूरि, लब्धिस्तव सह अवचूरि, पं. श्री नेमकुशलजी म.सा. कृति संपादन, सीता चरित्र और जीवविचार ढाल** का संपादन कार्य चालु है। पू. सा. श्री **मधुरहंसाश्रीजी** म. **आत्मशिक्षा** का लिप्यंतर कर रही है। पू. सा. श्री **धन्यहंसाश्रीजी** म.सा. **सम्यक्त्व सप्ततिका सह अवचूरि** का लिप्यंतर कर रही है।

वर्धमान जिनरत्नकोश प्रकल्प अंतर्गत पू. आ. श्री **मुनिचंद्रसू.** म.सा., पू. आ. श्री **हर्षसागरसू.** म.सा., पू. आ. श्री रामलालजी म.सा., पू. उपा. श्री **भुवनचंद्रजी** म.सा., पू.मु. श्री **धर्मशेखरवि**.म.सा., पू.मु.श्री **नयबोधिवि**.म.सा., पू.मु.श्री **ध्यानसुंदरवि**.म.सा., पू.मु.श्री **चंद्रदर्शनवि**.म.सा., पू. मु.श्री **मुक्तिश्रमणवि**.म.सा. तथा पू.मु.श्री **उदयरत्नवि**.म.सा. को हस्तलिखित प्रत संबंधी माहिती प्रदान करने का लाभ मिला।

प्राचीन श्रुतसंपदा के समुद्धार अर्थे समुदार सहयोग देनेवाले महानुभावों की नामावली

झेट्स कोस्मेटिक प्रा. लि., मुंबई
सौ. अनिता किरण दर्डा, हाईड पार्क, पुणे
श्री नलिनकांत जेवतलाल दलाल, पुणे
श्री अभयजी श्रीश्रीमाळ (अभूषा फाउंडेशन), चेन्नई
श्री मोहनलालजी ताराचंदजी संघवी, हाईड पार्क, पुणे
श्री कांतीलालजी केशरीमलजी संघवी, हाईड पार्क, पुणे
स्टील एम्पायर, पुणे
श्री सुधीरभाई एस. कापडिया, मुंबई
श्री हिरामणि जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक मंदिर, महर्षिनगर, पुणे
दीक्षा उत्सव समिति, अहमदाबाद
श्री चंद्रप्रकाश फाउंडेशन, पुणे
श्री गोडी पार्श्वनाथजी टेंपल ट्रस्ट, गुरुवार पेठ, पुणे
श्री मरीन ड्राईव जैन आराधक ट्रस्ट, मुंबई
श्री सुधीरभाई सुमतिलाल शाह, हाईड पार्क, पुणे
श्री हरेनभाई हसमुखलाल शाह, क्लाउड नाईन, पुणे
डो. रवींद्र कनैयालाल जैन, हाईड पार्क, पुणे
श्री जयदीपभाई पुखराजजी जैन, हाईड पार्क, पुणे
श्रीमती सपना मंदार केसकर, हाईड पार्क, पुणे
संघवी अमृतलालजी धुडाजी भन्साली, हाईड पार्क, पुणे
श्रीमती कांचनबेन प्रविणचंद्र जयप्रकाश श्रोफ, हाईड पार्क, पुणे
पू. श्री उपा. भुवनचंद्रजी म.सा. की प्रेरणा से
श्री पार्श्वचंद्रसूरि गच्छीय संस्था, बीकानेर
श्री श्रीपालजी मेहता हाईड पार्क, पुणे
श्री घीसुलालजी प्रतापभाई परमार, पुणे
श्री निरवभाई प्रतापभाई शाह, मुंबई
सौ. कविताबेन रितेशभाई कोठारी, बिबवेवाडी, पुणे
श्री सी. आर. ओसवाल हाईड पार्क, पुणे
श्री पंकजजी सुदर्शनजी चोरडिया, पुणे
श्रीमती उर्वशीबेन शाह, पुणे
श्री कीरिटभाई चिमनलाल संघाणी परिवार, मुंबई

प्रतिभाव

जैन धर्म के श्रुतज्ञान की प्राचीन भव्य और दिव्य विरासत को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संरक्षित और संवर्धित करने का प्रयास यहाँ पर हो रहा है वह अनुमोदनीय है। इस कार्य में मुनिश्री अपने सांस और प्राण डाल रहे है यह हकीकत रोमहर्षक है। उन्होंने जो टीम तैयार की है वह भी कुशल है। श्रुतज्ञान की विरासत को हजारों वर्ष तक आगे बढानें में इस संस्था का योगदान अद्भुत है।

- संजय के. वोरा (पत्रकार)

सुवाक्य

सरस्वती तमोवृन्दं शरज्ज्योत्स्नेव निघ्नती।
नित्यं वो मङ्गलं दिश्यात् मुनिभिः पर्युपासिता ॥
-जीवाभिगमवृत्ति, श्रीमलयगिरिसूरिजी अंतिम मंगल

शरद पूनम की चांदनी के समान अंधेरे के समूह को दूर करने वाली मुनिओं द्वारा पूजित सरस्वती देवी आपको मंगल प्रदान करे।

Printed Matter
Posted under clause 121 & 114 (7) of P & T Guide

To,

From : Shrutbhavan Research Centre
(Initiation of Shrutdeep Research Foundation)
47/48, Achal Farm, Nr. Sachchai Mata Mandir, Ahead of Jain Agam Temple, Katraj, Pune-411046
Mo. 07744005728 Email : shrutbhavan@gmail.com Website : www.shrutbhavan.org

For Informative and Inspirational speeches about Shrut please subscribe our Shrutbhavan YouTube channel